International Journal of Applied Research 2014; 1(1): 452-453

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 3.4
IJAR 2014; 1(1): 452-453
www.allresearchjournal.com
Received: 13-10-2014
Accepted: 19-11-2014

डॉ. पारुल मिश्रा
विक्ता, शिक्षा शास्त्र विभाग
एन0 ए0 के0 पी0 पी0 जी0 कॉलेज, फर्रुखाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

Correspondence
डॉ. पारुल मिश्रा
विक्ता, शिक्षा शास्त्र विभाग
एन0 ए0 के0 पी0 पी0 जी0 कॉलेज, फर्रुखाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

वैदिक साहित्य एवं सामाजिक कल्याण की अवधारणा

डॉ. पारुल मिश्रा

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति एवं समाज के वास्तविक स्वरूप को यदि समझना चाहते हैं तो हमें वेदों का अध्ययन करना ही होगा। पाश्चात्य विद्वान विंटर नित्स का भी कथन है– ''यदि हम अपनी संस्कृति की आदिम अवस्था को समझना चाहते हैं तो हमें भारत की शरण में जाना होगा, जहां भारोपीय जाति का पुरातन साहित्य सुरक्षित है।'' इस प्रकार वेद समस्त संसार के लिए मार्गदर्शक हैं।

वैदिक साहित्य समस्त संसार के प्राचीनतम ज्ञान कोश हैं जिनकी महत्ता को आज पूरा विश्व स्वीकार करने लगा है। वैदिक साहित्य से तात्पर्य उस साहित्य से है जिसका विकास वैदिक काल में हुआ। इसमें वेद ब्राह्मण, अरण्यक एवं उपनिषदों को शामिल किया जाता है। वेद भारतीय परम्परा में प्राचीनतम और सर्वाधिक पवित्र माने जाने वाले ग्रंथ है। मनुस्मृति में स्पष्टतः कहा गया है कि धर्म विषयक जिज्ञासा के समापन के लिए श्रुति ही प्रमाण है–

''धर्म जिज्ञास्यमानाना प्रमाण परमं श्रुति।''

वेद शब्द का लक्ष्यार्थ वह ज्ञान है जो नित्य एवं शाश्वत है, जिसको प्राचीन भारतीय ऋषियों ने चिंतन एवं मनन के द्वारा समाधि अवस्था में अर्जित किया था। धातुपाठ में 'विद्' धातु चार अर्थों में प्रयुक्त हुई है– ज्ञान अर्थ में, सत्ता अर्थ में, लाभ अर्थ में, एवं विचारण अर्थ में। जिसके द्वारा व्यक्ति सभी सत्य विद्याओं को जानते हैं, प्राप्त करते हैं, और विद्वान होते हैं, वह वेद हैं।

वेद हमारे मार्गदर्शक रहे हैं। धार्मिक पर्वो एवं विशेष उत्सवों पर हिंदू समाज में आज भी वैदिक परम्पराओं एवं रीति–रिवाजों का प्रचलन है। भारतीय धर्म संस्कृति, सभ्यता, भाषा, साहित्य विद्या और कला की उत्पत्ति, विकास एवं अभ्युदय में वैदिक साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् व स्मृतियों आदि में वेदों को ईश्वर कृत स्वीकार किया है इस कारण भारतीय समाज में लोक कल्याण के लिए वेदों में स्पष्ट निर्देशन मिलता है। इसके ईश्वरकृत स्वरूप के कारण आचार्य मनु ने वेदों की निंदा करने वालों वाले को नास्तिक कहा है–

''नास्तिकों वेदनिन्दकः''

वैदिक साहित्य में अच्छे कर्मों के महत्व को स्वीकार किया गया है और माना गया है कि हमारे अच्छे कर्म सिर्फ हमारा ही नहीं अपितु सम्पूर्ण लोक का ही कल्याण करते हैं। विश्व देवों को समर्पित एक सूक्त में वशिष्ठ ऋषि ने कहा है–''पुण्यात्माओं के सुकृत सबका कल्याण करने वाले होते हैं–

''ष नः सुकृतां सुकृतानि संतु''

स्पष्ट है कि हमारे अच्छे कर्म से देव हमें उन्न, वस्त्र, धन पशु, उत्तम संतान आदि प्रदान करते हैं। इस प्रकार वेद 'कर्मवाद सिद्धांत' का प्रतिपादन करते हैं। वैदिक साहित्य में पुण्य कर्मों में यज्ञ को सबसे उच्च स्थान दिया गया। यज्ञों को समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाला कहा गया था।

''वर्षा यज्ञो वृष्टाः संतु यक्षियाः।''

शतपथ ब्राह्मण में भी यज्ञ को मानव का श्रेष्ठ कर्म माना गया है

''यज्ञो तै श्रेष्ठतम कर्मः''
(शतपथ ब्राह्मण 1 ।7 ।315)

ऋग्वैदिक काल में ऋषि व मनीषियों का दृढ़ विश्वास था कि यज्ञ से यजमान की सभी इच्छायें पूर्ण होती हैं। इतना ही नहीं यज्ञ कर्म एवं परम्पराओं से तत्कालीन समाज के लोक कल्याण की भी कामना की जाती थी। इसकी इन्हीं विशेषताओं के कारण धार्मिकों एवं दर्शनिकों ने यज्ञ को कर्म का मूल कहा है।

वैदिक काल में यद्यपि पितृसत्तात्मक समाज था फिर भी स्त्रियों का पद काफी ऊँचा था। पुत्रियों को है हेय और घृणा की दृष्टि से नहीं देखा जाता था इसके प्रमाण हमें ऋग्वेद में मिलते हैं जहाँ पुत्र एवं पुत्रियों और दोनों के दीर्घायु की कामना का वर्णन मिलता है। बालिकाओं को विभिन्न क्षेत्रों जैसे धार्मिक साहित्य, युद्ध कौशल, गृहकार्य, विभिन्न कलाओं जैसे संगीत, नृत्य, वादन आदि की वैदिक शिक्षा का प्रबंध था। चूँकि बाल विवाह तथा पर्दाप्रथा नहीं थी, अतः बालिकाओं को शिक्षा का पर्याप्त अवसर मिलता था। कई ऋषि स्त्रियों की रचनाएं ऋग्वेद में मिलती हैं तथा वैदिक कालीन विदुषी महिलाओं गार्गी, लोपामुद्रा, घोषा तथा विश्ववारा से भी हम सभी परिचित हैं।

विभिन्न सामाजिक बुराइयों के विपरीत ऋग्वेद में उल्लेखित कथन से स्पष्ट होता है कि उस समय विधवा विवाह पर भी रोक नहीं था।

''स्त्री उठो। तुम उसके पास लेटी हो जो जिसकी इहलीला अब समाप्त हो गई है। अपने पति से दूर हटकर जीवितों के संसार में आओ और उसकी पत्नी बनो जो तुम्हारा हाथ पकड़ता है और तुम से विवाह करने को इच्छुक है। (ऋग्वेद)

इस वैदिक साहित्य में लोक कल्याण में स्त्री कल्याण व स्त्री शिक्षा को भी विशेष दर्जा दिया जाता था।

वर्तमान समाज में हम देख रहे हैं कि समाज अहिंसा के धर्म को भूल धीरे–धीरे हिंसा की ओर जा रहा है, पर वैदिक साहित्य में सामाजिक व्यवस्था के अंतर्गत अहिंसा की भावना को अत्यंत पवित्रता की दृष्टि से देखा जाता था। जो कि तत्कालीन सामाजिक मूल्य को परिलक्षित करता है। एक मंत्र में पूर्वजों को हिंसा तथा पाप से रहित कहा गया है–

''यथा चित् पूर्वे परिवार आसुसेधा अनवद्याः अरिण्दाः''
(ऋग्वेद 6 ।10 ।04)

वैदिक काल में ईश्वर प्राप्ति जीवन का अंतिम लक्ष्य होता था तथा प्राणियों के प्रतिसद्भावना व अहिंसा की भावना को देवताओं की कृपा प्राप्ति का साधन माना गया था। बैदिक काल में अहिंसा से प्राप्त धन को ही ग्रहण्य बताया गया था। अर्थात् लोक कल्याण से प्राप्त धन ही श्रेष्ठ था। हिंसक व्यक्ति को हेय दृष्टि से देखा जाता था तथा वैदिक मंत्रों में हिंसक के प्रति घृणा तथा उसको दण्ड देने की भावना विद्यमान है यजुर्वेद में तो हिंसक व्यक्ति को उसी प्रकार पीस कर दण्डित करने की प्रार्थना की गयी है जिस प्रकार दांतो से अन्न पीसा जाता है।

वैदिक साहित्य में सामाजिक ढांचा में भी कार्य विभाजन के आधार पर एक नियोजित व्यवस्था के साथ किया गया। समाज के सर्वांगीण विकास के लिए चतुर्वर्ण व्यवस्था की गयी थी जिससे समाज को सुव्यवस्थित रूप प्रदान किया जा सके। चातुर्वर्ण व्यवस्था के अनुसार मुख्यरूप से आध्यात्मिक चिंतन ब्राह्मणों के द्वारा होता था। क्षत्रिय समाज सुशासन के द्वारा सामाजिक कल्याण का कार्य करता था। वैश्य वर्ग आर्थिक उत्थान तथा शुद्ध वर्ग शिल्प आदि कलाओं के द्वारा राष्ट्र के वैभव की अभिवृद्धि करता था। इस तरह पूरे देश व समाज में सामाजिक, आर्थिक तथा भौतिक उन्नति की व्यवस्था थी। इस प्रकार धर्म को केंद्र में रखते हुए सिर्फ मानव मात्र ही नही, अपितु पशु–कीट सभी के साथ दयापूर्ण व्यवहार होता था।

वैदिक कालीन साहित्य से ज्ञात होता है कि धर्म के आधार पर शासन चलाने वाले राजाओं के शासन में कोई चोर, मद्यपान करने वाला तथा अविद्वान नहीं होता था।

न मेस्तेनो जनपदे न कदर्यो न गद्यपः।
नानाहितामिनविद्वान न स्वैरी स्वैरणी कुतः।।
(उपनिषद)

अर्थात वैदिककाल में अपराध विहीन समाज था और शिक्षा का समाज में प्रसार था हम सभी जानते हैं वैदिक काल में स्त्री पुरुष सभी को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। अकर्मण्य व्यक्ति को समाज के लिए अहितकर माना जाता था और उसकी वैदिक साहित्य में आलोचना की गई है।

इस प्रकार वैदिक समाज में लोकहित को सर्वोच्च माना जाता था, राजाओं की दानशीलता का भी उल्लेख वैदिक साहित्य में मिलता है। अंत में कहा जा सकता है कि वैदिक साहित्य में सामाजिक क्षेत्र में लोक कल्याण की उदार भावनाएं विद्मान थी।

संदर्भ ग्रंथ–

1. शतपथ ब्राह्मण 1 ।7 ।3 ।5
2. ऋग्वेद 10 ।66 ।6
3. एस.एन. दास गुप्ता ''ए हिस्ट्री ऑफ इंडियन फिलासॉफी वॉल्यूम–1 पृष्ठ–2।
4. अथर्ववेद–12 ।1 ।11।
5. ऋग्वेद–10 ।124 ।05
6. मित्र भास्कर (2001) 'वैदिक शिक्षा पद्धति' महर्षि संदीपनी राष्ट्रीय वेद विद्या प्रतिष्ठान, उज्जैन।
7. घोष सुरेश चंद्रा (2001) ''द हिस्ट्री ऑफ एजुकेशन इन एनशियेंट इंडिया, मुनीशराम मनोहरलाल पब्लिकेशन, न्यू देल्ही।